सारांश (Abstract)

सामाजिक यथार्थ समष्टि का यथार्थ है, जिसमें रचनाकार आर्थिक यथार्थ के साथ-साथ सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक यथार्थ का भी मूल्यांकन करता है और साथ ही साथ समाज में घटित सभी वास्तविक कार्य-व्यापार का सूक्ष्म और व्यापक अंकन भी किया करता है। स्वातंत्र्योत्तर परिवेश पर दृष्टिपात करें तो हम पाएंगे कि वहाँ विसंगति, विद्रूपता और विडंबना के अलावा कुछ नहीं दिखाई पड़ता है। सामाजिक यथार्थ अंकन स्वातंत्र्योत्तर साहित्य की उपलब्धि है। सामाजिक यथार्थ का सामान्य अर्थ है- समाज का यथार्थ अर्थात् समाज की वास्तविकता का चित्रण। रचनाकार समाज की तमाम विडंबनाओं को आत्मसात करते हुए बड़े ही सूक्ष्म तरीके से सामाजिक यथार्थ के माध्यम से समाज के वृहत्तर सत्य को सामने लाता है।

हिन्दी कथा-साहित्य में समकालीन कथा-साहित्य का विशेष महत्त्व है। 'समकालीन' एक भ्रामक शब्द है, इसलिए सबसे पहले इसे और इसके बिंदुओं को समझना बहुत जरूरी है। हिंदी के कुछ विद्वान साठ के बाद से ही समकालीनता की शुरुआत मानते हैं, तो कुछ इस समय को दस-पंद्रह वर्षों बाद लेकर जाते हैं। ऐसे में समकालीनता की समय-सीमा विद्वानों में मतभेद का कारण है। 'समकालीनता' अपने मूल रूप में 'समसामयिक' और अंग्रेजी

के 'कंटेम्पोरेनिटी'(Contemporaneity) का पर्याय है, जिसका अर्थ होता है-'उसी समय या कालखंड में घटित होनेवाली घटना या प्रवृत्ति या एक ही कालखंड में जी रहे व्यक्ति। हिंदी कथा-साहित्य की बात की जाए तो समकालीनता का संबंध 'नक्सलबाड़ी आंदोलन' से भी दिखाई पड़ता है क्योंकि इस आंदोलन ने समकालीन कथा-साहित्य को प्रभावित किया। यह वह समय था जब 'नई कहानी' अपना सर्वश्रेष्ठ दे कर मलीन पड़ने लगी थी और इसके साथ हिन्दी कथा-साहित्य में एक स्थिरता लक्षित की जाने लगी थी, एक ठहराव-सा आ गया था, जनता में साहित्य को ले कर वह रुचि देखने को नहीं मिल रही थी, जो उस समय के लिहाज से एक दुर्घटना थी। सन् 1962 ई. के भारत-चीन युद्ध के परिणामस्वरूप सब तितर-बितर हो रहा था। ऐसे दौर में जनता के दुःख और परेशानियों को बाँटनेवाला, समझनेवाला रचनाकार चाहिए था और ऐसा रचनाकार दूर-दूर तक दिखाई नहीं दे रहा था। उस समय आवश्यकता ऐसे कथाकार की थी, जिसकी लोक की नब्ज पर सही पकड़ हो। कहना न होगा कि कथाकार काशीनाथ सिंह इसीलिए अपने समय की रचनात्मक आवश्यकता थे। यह एक ऐसा दौर था, जब लोग आजीविका की खोज में गाँवों से नगरों की ओर पलायन कर रहे थे और ऐसे में स्थापित होने की चाह में कहीं विस्थापित ही हो रहे थे। काशीनाथ सिंह के कथाकार ने सदी को बदलते देखा, क्योंकि उसकी रचनात्मक यात्रा बड़ी लंबी है और उसमें कई पड़ाव भी आते हैं। उनका कथाकार बड़े गौर-से समाज में आ रहे बदलावों को देख रहा था।

कथाकार काशीनाथ सिंह के शुरुआती दिनों में उनके अलावा प्रगतिशील दृष्टि के साथ हिन्दी कथा साहित्य-जगत में ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह तथा रवीन्द्र कालिया जैसे साहित्यकारों का पदार्पण होता है। काशीनाथ सिंह अपनी भाषा, शैली और दृष्टि से इस समय के कथाकारों में अपनी एक अलग पहचान कायम करते दृष्टिगोचर होते हैं। *'सुख'* शीर्षक कहानी से ही इनका मिजाज और अंदाज बदला हुआ नजर आता है। यह कहानी अपने समय के मिजाज की पड़ताल करती नजर आती है। पुरानी परिपाटी को ध्वस्त करते हुए काशीनाथ सिंह समाज के समकालीन यथार्थ को अपनी रचना के माध्यम से चित्रित करते नजर आते हैं। पिछले 57 सालों से लिख रहे काशीनाथ सिंह की पूंजी लगभग 40 कहानियाँ और पाँच उपन्यास *(अपना मोर्चा', 'काशी का अस्सी', 'महुआ चरित', 'रेहन पर रग्घू' और 'उपसंहार')* हैं और इन्हीं रचनाओं में सन् '60 से अब तक का लेखा-जोखा मिल जाता है, जो किसी और रचनाकार के यहाँ देखने को नहीं मिलती। कहना न होगा कि उनका लेखन-कार्य थोक के भाव से नहीं हुआ और उन्होंने कभी भी स्वयं को दुहराया नहीं । एक लेखक के रूप में वे सदा सचेष्ट रहे कि किस प्रकार अपनी सीमाओं का अतिक्रमण किया जाए। उन्होंने मात्रा की बजाय रचना की गुणवत्ता को महत्व दिया।

सन् साठ के बाद समाज में बहुत उथल-पुथल हुए हैं, जिनको लेखक की पारखी दृष्टि ने करीब से देखा है और उन विडंबनाओं और विसंगतियों को अपनी यथार्थदृष्टि की कसौटी पर कस कर अपनी कहानी और उपन्यासों

के माध्यम से प्रस्तुत किया है; फिर चाहे वह भारत-चीन युद्ध हो, नक्सलबाड़ी आंदोलन हो, आपातकाल का समय हो, इंदिरा गांधी की हत्या हो या फिर उदारीकरण, भूमंडलीकरण का दौर हो, बाबरी-मस्जिद से जुड़ी घटना हो। ये तमाम घटनाएं लेखक की नजरों (जीवन-काल) के सामने घटी हैं। काशीनाथ सिंह का रचना-संसार विविधतापूर्ण है। उनके कथा-साहित्य में गाँव में करवट लेता जीवन, संकटग्रस्त समाज की विसंगतियाँ और मध्यवर्गीय जीवन की मायूसियाँ हैं। इसके साथ ही निम्न-वर्ग के जीवन का ऐसा चित्रण उनके यहाँ मिलता है, जहाँ वह वर्ग अभावग्रस्त होते हुए भी आँखों में सुख की ललक लिए जिंदगी जीने के लिए मजबूर है। समकालीन जीवन के बदलते हुए नंगे यथार्थ को काशीनाथ सिंह ने अपनी रचनाओं में नए संदर्भों के साथ चित्रित किया है।

अपने लेखन की शुरुआत काशीनाथ सिंह कहानियों से करते हैं और आगे चलकर संस्मरण, नाटक, आलोचना और उपन्यासों में भी हाथ आजमाते हैं। 'संस्मरण' विधा को नया मुकाम दिलाने में काशीनाथ सिंह का अवदान महत्वपूर्ण है। परंतु काशीनाथ सिंह की मूल पहचान उनके भीतर के कथाकार से होती है। वे एक कथाकार के रूप में पहचान बनाने में सक्षम हुए भी। काशीनाथ सिंह की रचनाएं संख्या में कम होते हुए भी इस बात का कहीं भी आभास नहीं होने देती कि उनसे उनके समय (वर्तमान समय) का कोई अंश छूट गया हो। काशीनाथ सिंह का रचनाकार जीवन को गहराई से पकड़ता है, जीता है और जानने की चेष्टा करता है। इसी कवायद में कहीं

रचना अपना आकार ग्रहण करती है। वह भाषा की ऐसी जमीन तोड़ती है, जो व्यंग्य की उर्वरता से अपने-आप को परिभाषित करती है।

भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, उदारीकरण आदि आधुनिक समय में एक ऐसे छलावे के रूप में हमारे समाज में, जीवन में प्रविष्ट हुए हैं कि हम अपनी जड़ों से ही उखड़ गए। आधुनिक बनने की चाह में हमसे अपनी जमीन भी छूट गई, संबंध छूट गए, गाँव छूट गया, परम्परा, संस्कृति सब कुछ छूट गया। काशीनाथ सिंह के कथा-साहित्य में इन तमाम विसंगतियों का चित्रण मिलता है। बदलते समाज की सच्ची तस्वीर देखने को मिलती है। अपने लेखन के पहले दौर में लेखक कहानी से शुरुआत करता है, परंतु सन् 1972 ई. में अपने 'कंफर्ट-जोन' से बाहर आकर *'अपना मोर्चा'* शीर्षक उपन्यास की रचना करता है, जिसे विश्वविद्यालयी-जीवन और परिसर जीवन पर आधारित हिंदी का प्रथम उपन्यास होने का दर्जा प्राप्त है। उक्त उपन्यास में आपातकाल और भाषायी आंदोलन की गहरी छाप भी है। इसके अलावा जहां *'काशी का अस्सी'* उपन्यास में बनारस शहर के बदलते परिवेश के बहाने पूरे देश की बदलती तस्वीर पेश की गई है, वहीं *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में गाँव पर भूमंडलीकरण की मार, किसान-समस्या, दलित-समस्या, बुजुर्गों की समस्या और आज के युवा की वह तस्वीर सामने रखी गई है, जिसे अपने गांव-घर, देश-समाज से कुछ लेना-देना नहीं । समाज और राष्ट्र के प्रति उनके मन में कोई जिम्मेदारी का एहसास नहीं। ऐसे में उक्त उपन्यास के एक किरदार बूढ़े पिता प्रो. रघुनाथ अपनी बहू सोनल के 'रेहन' पर रहने के लिए मजबूर हो

जाते हैं क्योंकि उनके बच्चे संजय और धनंजय नोएडा और अमेरिका में अपने जीवन का सुख उठा रहें हैं। लेखक ने उक्त उपन्यास के बहाने हमारे गांव-घर की उन तमाम विसंगतियों को चित्रित किया है, जो भूमंडलीकरण का 'बाई-प्रोडक्ट' हैं।

'महुआ चरित' जो कि लेखक का चौथा उपन्यास है, में वर्तमान समय में स्त्री-समस्या को चित्रित किया गया है। लेखक ने महुआ के माध्यम से समाज में रह रही एक स्त्री की पीड़ा को दर्शाया है।

लेखक का पांचवाँ और अंतिम (अब तक का) उपन्यास *'उपसंहार'* (सन् 2014 में) प्रकाशित हुआ। काशीनाथ सिंह का यह उपन्यास अपने बाकी उपन्यासों से बिलकुल अलग-सा जान पड़ता है। इस बार लेखक ने अपने उपन्यास के कथानक के लिए एक मिथक को चुना है। इस मिथक को अपने हिसाब से प्रयोजनीय बनाने के क्रम में उन्होंने इस मिथक को तोड़ा और मरोड़ा भी है। इस मिथक के बहाने काशीनाथ सिंह ने अपने इस उपन्यास में समकालीन परिदृश्य को सामने लाने की कोशिश की है, जिसमें कृष्ण को भी ईश्वर की बजाय एक साधारण मनुष्य की विसंगतियों के साथ जीने को मजबूर दिखाया गया है।

उपन्यासकार काशीनाथ सिंह के पश्चात् कहानीकार काशीनाथ सिंह पर कुछ निष्कर्षात्मक टिप्पणियाँ अपेक्षित हैं। कहानीकार काशीनाथ सिंह की कहानियाँ आज़ादी के बाद भारत में आए संबंधों के बदलाव, स्त्री-पुरुष

संबंधों के नए चेहरे, प्रेम के नए रूप, अजनबीपन, अकेलापन, व्यर्थताबोध, मूल्यों के विघटन, बाजारवाद, भूमंडलीकरण, नगरीकरण से व्युत्पन्न विडंबनाओं से हमें परिचित कराती हैं। इन कहानियों में हमारे समाज में धर्म, राजनीति और संस्कृति के विरूपित चेहरों का दर्शन होता है। उनकी कहानियों में जो आदमी है, वह अपनी असंगत स्थितियों के बावजूद हारा हुआ नहीं है। कहीं-न-कहीं वह स्थितियों से संघर्ष कर जिंदगी का मोती खोज ही लेता है। सबसे बड़ी बात यह है कि लेखक ने अपनी कहानियों के कथानक और पात्र अपने आस-पास के जीवन से लिए हैं। जिन सामाजिक स्थितियों और परिवेश का वर्णन लेखक ने किया है, उस परिवेश में उसका उठना-बैठना है और उन पात्रों के साथ उसका संवाद भी अक्सर होते रहता है। काशीनाथ सिंह ने उनके जीवन की विडंबनाओं को और उनकी जीवन-स्थितियों को अपने कथा-साहित्य में ज्यों का त्यों रख दिया है। इसके लिए वे विधाओं के शैल्पिक आग्रह के बार-बार आर-पार जाते हैं या कि उनके यहाँ विधाओं के समावेशीकरण की प्रवृत्ति भी दिखती है। किंचित ऐसा इसलिए भी हो सकता है क्योंकि समकालीन जटिल यथार्थ विधाओं के बने-बनाए 'फॉर्मेट' से पकड़ में न आ रहा हो, तो नई रचनाशीलता ने नए रूप की खोज कर ली हो।

शोधार्थी के इस शोध-कार्य में काशीनाथ सिंह के कथा-साहित्य पर उपर्युक्त उपन्यासों और कहानियों के बहाने से अपने समय के सामाजिक यथार्थ के विविध स्वरूपों को देखने एवं विश्लेषित करने की चेष्टा की गई है।

इस प्रयास में शोधार्थी द्वारा कोई भूल-चूक हो गई हो तो वह क्षमा-प्रार्थी है। उक्त शोध-कार्य कथाकार काशीनाथ सिंह के माध्यम से सामाजिक यथार्थ जैसे जटिल रचनात्मक उपजीव्य को समझने का लघु प्रयास भर है। निश्चय ही इसकी भी अपनी कुछ संभावनाएँ तथा सीमाएँ हैं, जिनसे उक्त क्षेत्र में भविष्य में किए जाने वाले शोध-कार्य के लिए मार्ग निर्मित हो सकेगा।

अस्तु!

सधन्यवाद ।